# हमने गहरे समुद्र में जिन्दगी के बारे में कैसे जाना?

आइजिक ऐसिमोव

हिंदी अनुवादः अरविन्द गुप्ता

# HOW DID WE FIND OUT ABOUT THE DEEP SEA?

**By: Isaac Asimov**

**Hindi Translation : Arvind Gupta**

# हमने गहरे समुद्र में जिन्दगी के बारे में कैसे जाना?

**आइज़िक ऐसिमोव**

**हिंदी अनुवादः अरविन्द गुप्ता**

1

पृथ्वी की सतह का लगभग सत्तर प्रतिशत हिस्सा महासागरों से घिरा है। पृथ्वी पर सूखी जमीन वाले महाद्वीपों का क्षेत्रफल सागरों की तुलना में आधे से भी कम है।

हमें महासागरों का सिर्फ सतही भाग ही दिखता है।
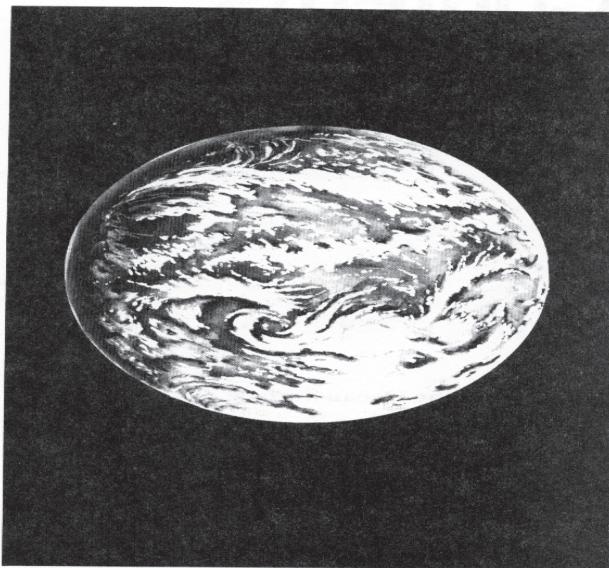
THE EARTH FROM SPACE

अंतरिक्ष से पृथ्वी

अगर आप पानी से भरे कांच के गिलास में से देखें तो वो आपको पारदर्शी दिखेगा। उसमें से प्रकाश की किरणें आसानी से गुजरेंगी।

अगर पानी साफ हो तो आप किसी झरने या ताल की तलहटी को आसानी से देख पाएंगे। पर आप किसी बड़ी नदी या तालाब की तलहटी नहीं

देख पाएंगे। और आप सागर में पानी की तहों के नीचे तो निश्चित ही नहीं देख पाएंगे। प्रकाश की किरणों को पानी की मोटी तहें धीरे-धीरे करके सोख लेती हैं।

इसी कारण एक लम्बे अर्से तक समुद्र की ऊपरी सतह के नीचे क्या होता है इसके बारे में लोगों को कुछ पता नहीं था। सागरों की गहराई कितनी होगी, या फिर उनका पेंदा होगा या नहीं इसके बारे में भी कोई नहीं जानता था।

नदियों, तालाबों और सागरों में जीवित प्राणी रहते हैं यह लोगों को पता था। उनमें तरह-तरह की मछलियों के साथ-साथ शेलफिश, सीपियां और झींगा मछलियां भी होती थीं। प्रैगएतिहासिक काल में भी लोग मछलियां का भोजन करते थे। बहुत से स्थानों पर समुद्री भोजन लोगों के खाने का बहुत महत्वपूर्ण भाग होता था।

समुद्र में कितनी गहराई तक जीवित प्राणी पाए जाते होंगे? क्या हमारे पूर्वज मछुआरों ने कभी इस पर अचरज किया? कुछ मानते थे कि मछलियां समुद्र की तलहटी तक मिलती होंगी। पर इसके बारे में पक्की तौर पर कोई कैसे मालूम करे?

आप चाहें तो समुद्र में गोता लगा सकते हैं। परन्तु आप बहुत गहराई तक नहीं डुबकी लगा पाएंगे और फिर वहां बहुत ज्यादा देर तक नहीं रह पाएंगे।

कुछ जगहों पर प्रशिक्षित गोताखोर होते हैं जो गहराई में डुबकी लगाकर वहां पत्थरों से चिपकी विशेष प्रकार की सीपियों को निकालकर लाते हैं। कभी-कभी इन सीपियों में मोती निकलते हैं।

क्योंकि मोती बहुत कीमती होते हैं इसलिए लोग उन्हें खोजने की भरसक कोशिश करते हैं। इसके लिए गोताखोर 50-फीट की गहराई तक डुबकी लगाकर वहां पानी के अंदर करीब डेढ़ मिनट तक का समय गुजार सकते हैं। इतनी देर में उन्हें सीपियां इकट्ठा करके सांस लेने के लिए पानी की सतह पर फिर वापस आना जरूरी होगा।

इन गोताखोरों को 50-फीट की गहराई तक बहुत से समुद्री जीव मिलते थे। परन्तु उससे अधिक गहराई के बारे में किसी को कुछ नहीं पता था।

1800 के आसपास लोगों ने इस सवाल के बारे में कुछ अटकलें लगायीं। बिना कोई प्रयोग किए वो इस नतीजे पर पहुंचे कि समुद्र की ऊपरी तहों के नीचे शायद कोई भी जीवन न हो। उनका तर्क कुछ-कुछ ऐसा था।

सभी जीव अपने भोजन के लिए पौधों पर निर्भित होते हैं। कुछ जीव अन्य जीवों को खाते हैं, परन्तु वो जीव भी पौधों पर आश्रित हैं। इसलिए जीवों के अन्य जीव खाने का चक्र चाहें कितना ही लम्बा क्यों न हो अंत में वे पौधे खाने वाले जीवों पर ही निर्भित होंगे।

पौधों के लुप्त होने से उन पर जिन्दा रहने वाले जीव भी भूख से मर जाएंगे। अगर धूप नहीं होगी तो पौधे उगेंगे नहीं। उन जीवों पर निर्भित रहने वाले अन्य जीव भी मर जाएंगे। इसका नतीजतन अंत में कोई जीव जिन्दा नहीं बचेगा।

मोतियों का गोताखोर
**PEARL DIVER**

यह पौधे जिन्दा कैसे रहते हैं?

पौधे जीवित कैसे रहते हैं? उन्हें कोई खाकर खत्म क्यों नहीं करता? पौधे लगातार नई कोशिकाएं बनाकर अपने तने, पत्तों और जड़ों को बढ़ाते हैं। इसके लिए वे हवा से कार्बन डाईऑक्साइड, मिट्टी से पानी, और पानी में घुले कुछ रासायनों का इस्तेमाल करते हैं।

इन सारे तत्वों को इकट्ठा करके आपस में मिलाने के लिए कुछ ऊर्जा लगती है जो उन्हें सूर्य की धूप से मिलती है। धूप के अभाव में पौधे बढ़ेंगे नहीं, उगेंगे नहीं। और फिर मौजूदा पौधों जब जीवों द्वारा खाने के बाद खत्म हो जाएंगे तो और पौधे नहीं मिलेंगे और फिर जानवर भूख से मर जाएंगे। अगर सूर्य चमकना बंद कर दे तो कुछ समय बाद पृथ्वी पर सारा जीवन लुप्त हो जाएगा।

पर जब तक सूर्य चमकता रहेगा, तब तक पौधे उगते रहेंगे और जानवर जीवित रहेंगे।

ऐसा ही समुद्र में होता है। समुद्र की ऊपरी तहों में असंख्यों छोटे-छोटे जीव पलते-पनपते हैं। इन सूक्ष्मजीवियों को सिर्फ माइक्रोस्कोप से देखा जा सकता है।
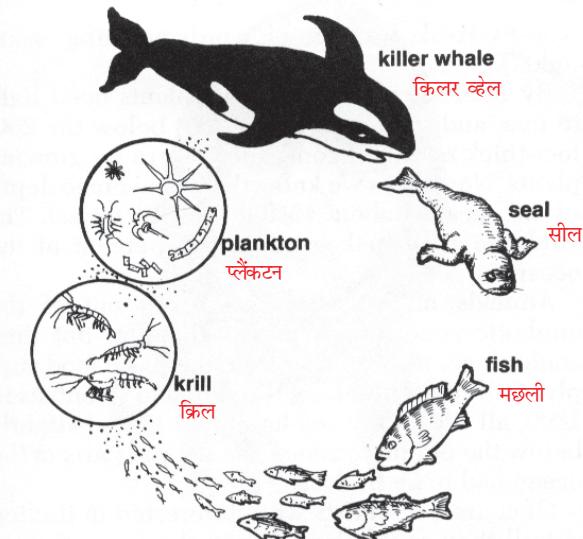
**OCEAN FOOD CHAIN STARTS WITH PLANKTON**

**समुद्र का भोजनचक्र प्लैंकटन से शुरू होता है**

छोटे जीव उन छोटे जीवों पर जिन्दा रहते हैं। कुछ बड़े जीव इन छोटे जीवों पर जीवित रहते हैं। और यही चक्र जारी रहता है। उन छोटे पौधों के बिना बाकी सभी जीव मर जाएंगे। और सूर्य के प्रकाश के बिना पौधे बढ़ना बंद हो जाएंगे।

परन्तु सूर्य की धूप समुद्र के पानी में बहुत गहराई तक नहीं घुस पाती है। धूप सतह से सिर्फ 250-फीट की गहराई तक ही पहुंच पाती है - जो पौधों के विकास के लिए पर्याप्त होता है। इसलिए समुद्र की सतह से 250-फीट तक की गहराई को यूफोटिक जोन (ग्रीक में मतलब 'अच्छा प्रकाश') कहा जाता है।

1800 तक वैज्ञानिकों को यह पता चल गया था कि पौधों को विकास के लिए प्रकाश चाहिए। इसलिए यूफोटिक जोन - यानी सतह से 250-फीट से अधिक गहराई में पौधे नहीं उगेंगे। आज हम जानते हैं कि समुद्रों की औसतन

गहराई 12,400-फीट (दो और एक-तिहाई मील) है। यूफोटिक जोन समुद्र की अतल गहराई का मात्र 2-प्रतिशत होगा।

समुद्र में जानवर यूफोटक जोन से नीचे की गहराई में तैर कर जाते होंगे परन्तु वे फिर भी भोजन के बुनियादी स्रोत्र से बहुत दूर नहीं जा पाएंगे। इसलिए 1800 के आसपास वैज्ञानिकों को लगा कि समुद्र में सारी जीवन यूफोटिक जोन और उससे कुछ नीचे तक ही सीमित होगा। समुद्र की अतल गहराईयां जीवनहीन होंगी।

वैज्ञानिक समुद्र की ऊपरी तहों में रहने वाले सभी जीवों के बारे में अधिक-से-अधिक जानना चाहते थे, पर इसके लिए गोताखोरी ही सबसे अच्छा हल नहीं था। अगर वैज्ञानिकों ने इस गहराई तक डुबकी भी लगाई तो भी वे वहां अपने अध्ययन के लिए ज्यादा देर ठहर नहीं पाते।

इसलिए समुद्र में खुद गोते लगाने के बजाए उन्होंने समुद्र के जीवों को सतह पर लाने की बात सोची गई। 1770 में डैनिश वैज्ञानिक ऑटो एफ म्यूलर (1730-1784) ने समुद्री जीवों को ऊपर खींचने के लिए एक विशेष प्रकार की 'ड्रेज' बनाई। इसमें एक लोहे के फ्रेम के साथ एक जाल जुड़ा था जो पानी में काफी गहराई तक जा सकता था। जीवित चीजें इस जाल में फंस जातीं और उन्हें ऊपर लाया जाता।

ब्रिटिश जीव वैज्ञानिक एडवर्ड फोर्बस ने (1815-1854) ने 'ड्रेज' नामके इस उपकरण का सफलतापूर्वक उपयोग किया। 1839 में उन्होंने इस उपकरण के ऊपर एक कविता भी लिखी जिसका सार कुछ एक प्रकार था:

अतल गहराई में जहां परियां सोती हैं,  
हमारी मशीन धीरे-धीरे डुबकी लगाती है  
वो वहां चलते-फिरते बेशकीमती जीवों को  
झट से पकड़ेगी! यह पौधे जिन्दा कैसे रहते हैं?  
वे जीव बचने और भागने की तमाम कोशिशें करेंगे  
वो खुद को टुकड़ों में बाटेंगे  
पर फिर भी उन्हें मशीन का आदेश मानना पड़ेगा  
और हमारे ज्ञान को बढ़ाने ऊपर आना ही होगा।

1930 में फोर्बस ने नार्थ-सी और ब्रिटिश आइल्स के आसपास के समुद्र से बहुत समुद्री जीवों को बाहर खींचा। 1841 में वो नौ-सेना के एक जहाज के साथ पूर्वी मेडिटिरेनियन गए। वहां उन्होंने समुद्र की गहराईयों से तमाम जीवों को सतह पर खींचा। फिर उन्होंने उन जीवों का गम्भीरता से अध्ययन किया। उनसे

पहले किसी भी वैज्ञानिक ने ऐसा शोध नहीं किया था। उन्हें यूफोटिक जोन से गहरे पानी में भी जीव मिले। मिसाल के लिए उन्हें चौथाई मील की गहराई से स्टार-फिश मिलीं।
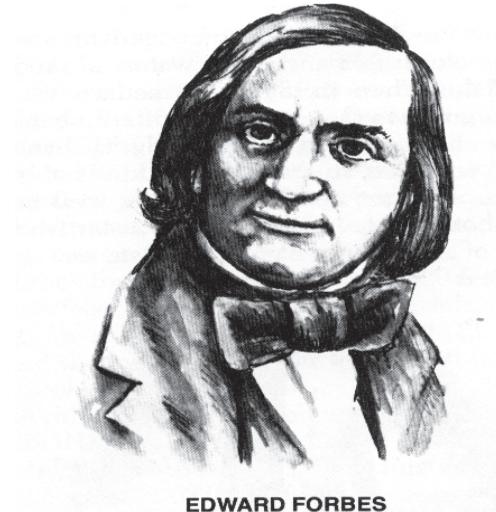
EDWARD FORBES
एडवर्ड फोर्बस

फोर्बस ने अनेकों वैज्ञानिक पर्चे लिखे जिसमें उन्होंने समुद्र में अलग-अलग गहराईयों पर मिले जीवों का वर्णन किया। उन्होंने दिखाया कि जैसे कि जमीन पर अलग-अलग स्थानों पर अलग प्रजाति के पेड़-पौधे और जीव मिलते हैं वैसा ही समुद्र में अलग-अलग गहराईयों पर होता है।

उन्होंने यह भी दिखाया कि समुद्र में अलग-अलग गहराईयों में अलग-अलग प्रजातियों के जीव मिलते हैं।

फोर्बस को समुद्र की सतह से 1800-फीट (एक-तिहाई मील) तक की गहराई तक जीवन के लक्षण मिलें। यह उन्हें समुद्री जीवन की सीमा लगी। 1843 में छपी किताब में उन्होंने 1800-फीट को जीवन मिलने की सीमा माना। उनके अनुसार समुद्र में उससे ज्यादा गहराई पर कोई जीवन नहीं था।

उन्होंने इस सीमा से नीचे के क्षेत्र को एजौइक जोन बुलाया। ग्रीक में इसका मतलब होता है 'जीवनहीन'। अगर फोर्बस की बात सच होती तो 85-प्रतिशत समुद्र जीवन-विहीन होता।

फोर्बस द्वारा उपयोग किया 'ड्रेज'

DREDGE USED BY FORBES

## 2 तार और बहाव

जब फोर्बस समुद्र के मुख्यत: जीवन-विहीन होने का ऐलान कर रहे थे उसी समय 1800-फीट के नीचे जीवन न होने की बात का खंडन हुआ।

1840 तक खोजियों को यह पता चल गया था कि दक्षिणी ध्रुव के आसपास का इलाका एक बर्फीला महाद्वीप था जहां कभी किसी इंसान ने पैर तक नहीं रखा था।

एक ब्रिटिश खोजी जेम्स क्लार्क रॉस (1800-1862) अपने जहाजों को पहली बार उस महाद्वीप के पास ले गया। 1841 में उसे अंटार्कटिका महाद्वीप के पास एक खाड़ी दिखाई दी जो तब से रॉस-सी के नाम से जानी जाती है।

रॉस, दक्षिण ध्रुव के पास स्थित इस अजीबो-गरीब विशाल जमीन के टुकड़े की किनार रेखा नापने के काम से असंतुष्ट था। उसने उसके आसपास के महाद्वीप की अधिक-से-अधिक जानकारी इकट्ठी करने की ठानी।

रॉस पहला व्यक्ति था जिसने समुद्रों की गहराई जानने की कोशिश की। उसने एक लम्बे और मजबूत तार (केबल) से एक भारी वजन बांधा और

उसे समुद्र में लटकाया। उसे उम्मीद थी कि वजन समुद्र के पेंदे को जाकर छुएगा। रॉस ने 'ड्रेज' का भी उपयोग किया और इससे वो 2400-फीट की गहराई तक से समुद्री जीवों को सतह पर लाने में सफल हुआ। यह लगभग आधे मील की गहराई थी - और फोर्बस द्वारा ऐलान की गई 1800-फीट की सीमा से कहीं ज्यादा थी।

JAMES CLARK ROSS

जेम्स क्लार्क रॉस

परन्तु रॉस के शोध का कोई खास फर्क नहीं पड़ा। एक कारण तो था कि रॉस का शोध यूरोप से बहुत दूर स्थित था और इसलिए यूरोप के वैज्ञानिकों ने उसे आसानी से नजरंदाज किया। बाकी वैज्ञानिकों का पक्का मानना था कि यूफोटिक क्षेत्र के नीचे की गहराईयां जीवन-विहीन होंगी। इसलिए उन्होंने रॉस के शोध पर कोई ध्यान नहीं दिया।

पर तब तक समुद्र की गहराई जानने में लोगों की रुचि जग चुकी थी। पर उसका समुद्र की गहराईयों में जीवन है या नहीं इससे कुछ लेना-देना नहीं था।

1844 में अमरीकी आविष्कारक सैम्यूल एफ बी मोर्स (1791-1872) ने सबसे पहली टेलिग्राफ लाइन का निर्माण किया। उस लाइन के तार बाल्टीमोर, मेरीलैंड से लेकर वाशिंगटन डी सी तक की 40-मील की दूरी तक गए।

पहली बार संदेशों को लम्बी दूरियों तक सेकंडों में भेज पाना सम्भव हुआ। जल्द ही अमरीका और अन्य देशों में टेलिग्राफ के तार खम्भों पर लगने लगे।

पर कुछ स्थान एक-दूसरे से, जमीन की बजाए पानी से जुड़े होते हैं। पर पानी में खम्भे गाढ़ना और उन पर तार लगाना सम्भव न था। पर तारों को वॉटरप्रूफ करके उनके केबिल्स बनाए जा सकते थे जिन्हें पानी की तलहटी में बिछाया जा सकता था। 1840 में पहली बार हडसन और मिसिसिपी नदियों में केबिल्स बिछाए गए।

1850 में इंग्लिश चैनल और आयरिश-सी में भी केबिल्स बिछाए गए। इस तरह इंग्लैंड टेलीग्राफ द्वारा फ्रांस और आयरलैंड से जुड़े।

पर सबसे बड़ी समस्या थी एटलांटिक महासागर में 3000-मील लम्बा केबल बिछाना। इससे यूरोप और अमरीका आपस में टेलीग्राफ से जुड़ जाते।

**SAMUEL F.B. MORSE**
**सैम्यूल एफ बी मोर्स**

यह एक बहुत महत्वपूर्ण बात होती। उदाहरण के लिए 1814 में ब्रिटेन और अमरीका ने घेंट, बेल्जियम में एक शांति की संधि पर हस्ताक्षर कर, 1812 के युद्ध को खत्म करने का समझौता किया था। पर जिस जहाज द्वारा यह जानकारी भेजी गई उसे ब्रिटेन से अमरीका पहुंचने में 6 सप्ताह लगे। उसके पहुंचने से पहले 8 जनवरी 1815 को न्यू औरलेन्स की जंग छिड़ गई। यह एक बहुत खतरनाक और भयावह लड़ाई थी। यह लड़ाई युद्ध समाप्त होने के बाद लड़ी गई।

एटलांटिक महासागर में केबल बिछने के बाद ऐसी गलती दुबारा फिर कभी नहीं दोहराई जाती।

ऐसे केबल को सफलतापूर्वक बिछाने से पहले महासागर के पेंदे के बारे में जानकारी हासिल करना जरूरी था। पेंदा कितना गहरा था? क्या वो समतल था? लोगों को रॉस द्वारा शुरू किए काम को जारी रखना था। उन्हें वजन लगे तारों को समुद्र में डुबोकर उनसे गहराई मालूम करनी थी। यह विधि 'साउंडिग' कहलाती है।

1860 में ब्रिटिश जहाज बुलडॉग ने एटलांटिक महासागर में 'साउंडिग' जारी रखी जिससे कि एटलांटिक केबल का सपना सफल हो सके। इससे पहले 1857 और 1858 में केबल को बिछाने के प्रयास विफल हुए थे।

बुलडॉग जहाज पर एक ब्रिटिश डाक्टर जार्ज सी वॉलिच (1815-1889) सवार थे। उनका काम समुद्री जीवन के बारे में खोजबीन करना था। अक्टूबर में एक तार के केबल को जहाज में ऊपर खींचा गया। यह स्थान एटलांटिक महासागर में स्काटलैंड और दक्षिणी ग्रीनलैंड के मध्य में स्थित था।

साउंडिंग लाइन समुद्र में 7560-फीट (डेढ़-मील) की गहराई तक गई। लाइन जब ऊपर आई तो उसके निचले हिस्से में 13-स्टारफिश चिपकी थीं। वो स्टारफिश मरी नहीं थीं और समुद्र की तलहटी से नहीं आयीं थीं। वो एकदम जिन्दा थीं।

वालिच ने इस बात का तुरन्त ऐलान किया कि समुद्री जीव ठंडे पानी की अंधेरी गहराईयों में भी जिन्दा पाए जाते हैं - जहां पौधे नहीं होते।

DEEP-SEA STARFISH
गहराई से मिली स्टारफिश

इस बार भी वैज्ञानिकों ने इस बात को नजरंदाज किया। इस अकेले, अनजुड़े तथ्य को नजरंदाज करना आसान था। समुद्र के बारे में वैज्ञानिक जो कुछ जानते थे इसका उससे कुछ सम्बन्ध नहीं था। इसलिए उससे मुंह फेरना आसान था।

पर सब लोगों ने इस घटना को नजरंदाज नहीं किया। उनमें एक स्कॉटिश जीवशास्त्री थे - चार्ल्स डब्लू थॉमसन (1830-1882)। उनकी समुद्री

जीवन में गहरी रुचि थी। और वो फार्बस द्वारा सुझाई सीमा का सदा के लिए खंडन करना चाहते थे।

उनका एक मित्र था जो ब्रिटेन की रॉयल सोसायटी का उपाध्यक्ष था। रॉयल सोसायटी ब्रिटेन की सबसे महत्वपूर्ण वैज्ञानिक संस्थान थी। दोनों ने मिलकर समुद्रों की गहराई पर एक वैज्ञानिक शोध के लिए रॉयल सोसायटी को धनराशि देने के लिए तैयार किया।

1868 में थामसन एक जहाज - लाइटनिंग पर सवार होकर उत्तरी एटलांटिक महासागर की ओर चले।

उसने इस सवाल का निश्चित हल निकाला। फोर्बस की 1800-फीट की सीमा के नीचे से जीव-जंतु इकट्ठा करते हुए उसे तमाम तरह के जीव मिले। और इससे 1800-फीट के नीचे समुद्र जीवन विहीन होते हैं यह बात सदा के लिए खंडित हुई। फोर्बस की सीमा सदा के लिए लुप्त हुई।

थामसन ने एक महत्वपूर्ण नई खोज की जब उसने समुद्र की अलग-अलग गहराईयों पर पानी का तापमान मापा।

तब तक यह माना जाता था कि गहराई में स्थित सारे पानी का तापमान 4-डिग्री सेल्सियस (39-डिग्री फैरनहाइट) होता है।

4-डिग्री सेल्सियस पर पानी सबसे अधिक सघन होता है। इस तापमान पर पानी की एक निश्चित मात्रा उससे कम या अधिक तापमान के पानी से भारी होगी। इसलिए 4-डिग्री सेल्सियस का पानी भारी होने के कारण समुद्र में डूबेगा और तलहटी पर पड़ा रहेगा।

चार्ल्स डब्लू थॉमसन
CHARLES W. THOMPSON

थामसन ने पाया कि समुद्र में पानी का तापमान एक-गहराई पर, लेकिन अलग-अलग स्थानों पर अलग होता है। कई स्थानों पर उसने पानी को 4-डिग्री सेल्सियस से कहीं अधिक गर्म पाया।

यह गर्म पानी कहां से आता होगा? समुद्र की तलहटी तो ऊष्मा का स्रोत्र नहीं हो सकती। कम से कम वहां ऐसी गर्मी कभी नहीं दिखी। इसका मतलब है कि यह पानी ऊपरी परतों से ही आया होगा। यानी समुद्र में पानी की धाराएं होंगी जो ऊपर का गर्म पानी गहराई तक ले जाती हैं। इसी तरह की अन्य धाराएं, गहराई का ठंडा पानी ऊपर सतह तक ले जाती हैं।

समुद्र में धाराएं
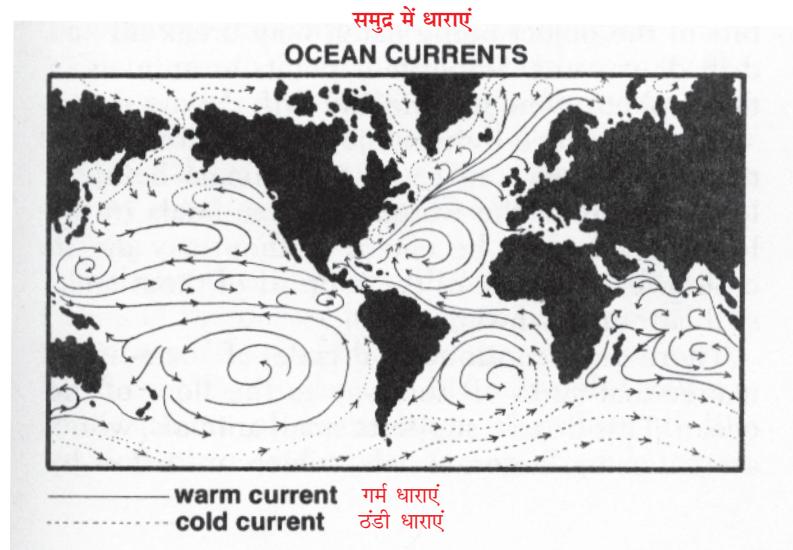
वैज्ञानिकों को समुद्र में सतही धाराओं के बारे में पहले से ही पता था। कुछ धाराएं सतही पानी को ध्रुवों से उष्ण प्रदेशों (ट्रापिक्स) तक लाती हैं और फिर उसे वापस ले जाती हैं। अब उन्हें यह पता चला कि कुछ धाराएं सतह से पेंदे तक पानी ले जाने-लाने का काम करती हैं। इसका मतलब पूरे समुद्र में पानी के बहने का सिलसिला जारी रहता है और उसके कारण ही यूफोटिक जोन के नीचे भी जीव-जंतु पाए जाते हैं।

समुद्र के सतही पानी में हवा की आक्सीजन घुल जाती है। समुद्री जीव-जंतु पानी में घुली इसी ऑक्सीजन पर जिन्दा रहते हैं। पानी की धाराएं इस ऑक्सजीन को समुद्र के तल तक ले जाती हैं। इससे समुद्र में हरेक गहराई पर रहने वाले प्राणियों को ऑक्सीजन मिलती है।

परन्तु समुद्र में बहुत गहराई पर जहां पौधे नहीं उगते वहां के प्राणियों को भोजन कैसे मिलता है?

वहां यह होता है:

जब कोई जीव किसी पौधे या अन्य प्राणी को खाता है तो उसका एक टुकड़ा टूट कर नीचे डूब सकता है। कभी-कभी यूफोटिक क्षेत्र के पौधे और प्राणी मरने के बाद नीचे डूबते हैं।

जैसे-जैसे यह चीजें जो कभी जिन्दा थीं समुद्र में डूबती हैं वैसे-वैसे गहराई में रहने वाले प्राणी उन्हें खाते हैं। निचली गहराईयों में रहने वाले प्राणी भी शिकार होने के बाद या मरने के बाद और नीचे की ओर डूबते हैं।

इस तरह समुद्र में ऊपर से नीचे की ओर लगातार जीवित और खाने योग्य पदार्थ डूबते रहते हैं। इन्हें छोटे प्राणी खाते हैं, जिन्हें बड़े प्राणी खाते हैं और उन्हें उनसे भी बड़े जीव खाते हैं। अंत में यह खाने योग्य पदार्थ समुद्र के तल तक पहुंचते हैं।

समुद्र की तलहटी में इस भोजन को वहां पर रेंगने वाले जीव खाते हैं या फिर वहां जीवित बैक्टीरिया (जीवाणु) उसे ठिकाने लगाते हैं।

अगर ऐसा होता तो सतही पानी के सारे जीवनदायी रासायन धीरे-धीरे करके समुद्र की तलहटी में जाकर इकट्ठा हो जाते। धीरे-धीरे करके समुद्र के तल में उनकी मात्रा बढ़ती और अंत में ऊपरी सतहों पर ये सारे रासायन खत्म हो जाते। फिर सतह पर जीवन लीला समाप्त हो जाती।

सतह पर पैदा होने वाले पौधों पर ही पूरा समुद्री जीवन निर्भर है। इनमें से कुछ पौधे सतह पर ही खा लिए जाते हैं और कुछ डूबने के दौरान। अगर सतह के सारे रासायन समुद्र के पेंदे में पहुंच जाते तो उससे समस्त महासागर की जीवन लीला खत्म हो जाती।

जो पदार्थ पेंदे तक पहुंचते हैं वो वहां सदा के लिए नहीं रहते हैं। याद करें कि पानी की धाराएं सतह से तल तक पानी लाती हैं, वो तल से सतह तक पानी वापस ले जाती हैं।

इसलिए ऊपर आने वाली पानी की धाराएं पेंदे से रासायनों को वापस सतह तक लाती हैं। ऊपर आने वाले रासायनों को यूफोटिक क्षेत्र के प्राणी अपने विकास के लिए उपयोग करते हैं। सूक्ष्मजीवी, पौधे खा-खाकर अपनी संख्या बढ़ाते हैं। और यह सिलसिला इसी तरह लगातार जारी रहता है।

अगर पानी की धाराएं समुद्र में लगातार ऊपर-से-नीचे और नीचे-से-ऊपर मंथन और उथल-पुथल नहीं कर रही होतीं तो पृथ्वी पर जीवन सम्भव न हो पाता। सबसे पहले जीवन का उद्गम समुद्र में ही हुआ और वहां से

ही करोड़ों साल बाद प्राणी पृथ्वी पर आए। इसलिए अगर समुद्र में जीवन नहीं शुरू हुआ होता तो फिर हमें पृथ्वी पर यह सब जीवन लीला देखने को नहीं मिलती।

एक छोटी सी खोज - कि समुद्र में अलग-अलग गहराईयों पर पानी का तापमान अलग-अलग होता है एक महत्वपूर्ण खोज साबित हुई।
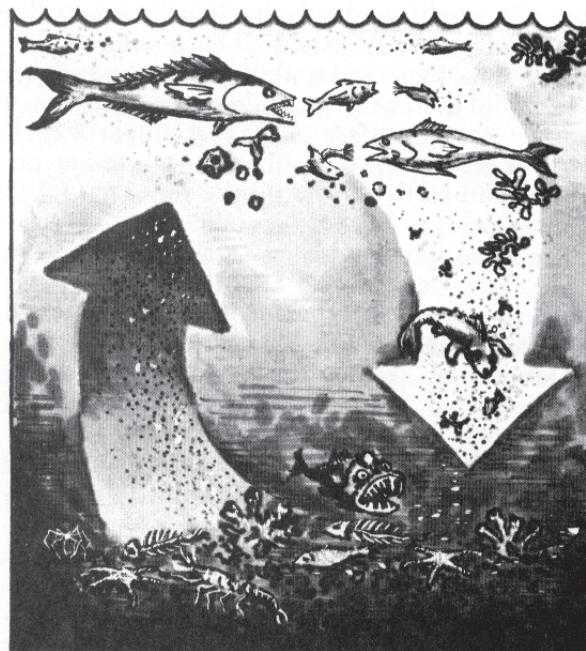
DRIZZLE EFFECT
ऊपर से नीचे गिरता भोजन
(ड्रिजल इफैक्ट)

# 3 चैलेंजर जहाज द्वारा अन्वेषण

1869 में थामसन एक दूसरे जहाज - पौरक्यूपाईन में शोध पर निकले। इस बार वो पौने-तीन मील की गहराई से विभिन्न प्रकार के जीव-जंतु लाने में सफल हुए। थामसन को लगने लगा कि इस प्रकार के जीव-जंतु समुद्र की हरेक गहराई और उसकी तलहटी तक में मिलेंगे।

पर समुद आखिर कितना गहरा था? थामसन को इसके लिए असली शोध करने की जरूरत महसूस हुई। वो एक ऐसा अन्वेषण चाहते थे जो पृथ्वी के सभी महासागरों का दौरा कर विभिन्न जगहों और परिस्थितियों में शोधकार्य करे। केवल ब्रिटेन के आसपास के द्वीपों तक ही शोध को सीमित न रहे।

इस बार इस मुहिम को न केवल रॉयल सोसायटी परन्तु ब्रिटिश नौसेना - जो उस समय दुनिया की सबसे बड़ी नौसेना थी, का भी सहयोग मिला। ब्रिटिश नौसेना का समुद्रों में दबदबा था और ब्रिटेन की सरकार अपने विशाल साम्राज्य के विस्तार के लिए नौसेना का भरपूर उपयोग करती थी। नौसेना, समुद्र को जितना अधिक जानती वो अपना काम उतना ही बेहतर अंजाम देती। इसलिए नौसेना ने थामसन के शोध में हिस्सा लेने की ठानी।

7 दिसम्बर 1872 को चैलेन्जर नाम के जहाज में थामसन रवाना हुए। अगले साढ़े-तीन साल तक वो जहाज समुद्री यात्रा करता रहा। चैलेन्जर ने सभी महासागरों की 80,000 मील से ज्यादा लम्बी यात्रा की। उसने कुल मिलाकर 362 स्थानों पर समुद्र की गहराई नापी। प्रशान्त महासागर - सबसे बड़ा होने के साथ-साथ सबसे गहरा निकला। वहां कई स्थानों पर समुद्र साढ़े-चार मील से भी ज्यादा गहरा था।

समुद्र के गहरे-से-गहरे भाग में से जहाज से चीजें निकालने की कोशिश की। हर बार जीव-जंतु निकल कर आए।

समुद्र की गहराई से जो जीव-जंतु निकल कर बाहर आए वो सतही जीव-जंतुओं जैसे ही थे - मछलियां, स्टारफिश, क्रेफिश, सीपियां आदि। उनकी प्रजातियां सतही जीवों से कुछ अलग थीं पर वो उनसे कोई खास अलग नहीं थे।

ऐसा लगा जैसे जीवन ने शुरुआत समुद्र की सतह पर की हो और फिर वो धीरे-धीरे जमीन जैसे ही समुद्र की गहराई में फैला हो। समुद्र की गहराई में कुछ जीव-जंतुओं का आकार-प्रकार थोड़ा अलग जरूर दिखा, जैसा कि ध रती पर भी हुआ, परन्तु इन सभी प्रजातियों को आसानी से पहचाना जा सकता था।

थामसन को 1876 में विज्ञान में विशेष योगदान के लिए नाईटहुड की

उपाधि प्रदान की गई। फिर उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं जिसमें उन्होंने चैलेन्जर के अनुभव का सविस्तार वर्णन किया। पुस्तक कई खंडों में छपी पर अंतिम खंड छपने से पहले थामसन की मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय उनकी आयु सिर्फ 52 साल की थी।

थामसन की वजह से ही आज हमें पता है कि समुद्र की गहराई में भी जीवन पाया जाता है। गहराईयों में सतह की अपेक्षा कम जीव-जंतु होते हैं। और ऐसा होना ठीक भी लगता है।
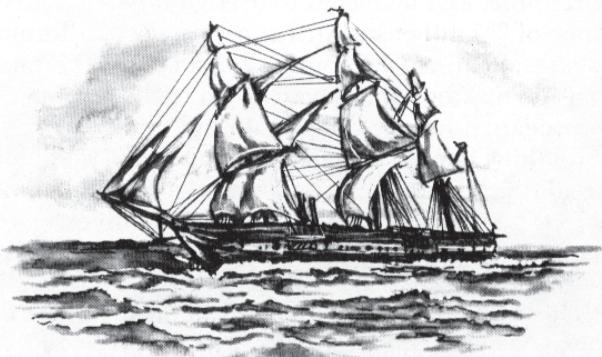
एस एस चैलेन्जर
**S.S. *CHALLENGER***

गहराई में रहने वाले सभी जीव-जंतु भोजन के लिए ऊपर से गिरने वाली खाने योग्य चीजों का उपयोग करते हैं। जितनी ज्यादा गहराई होती है उतनी ही ऊपर से गिरने वाले भोजन की मात्रा कम होती जाती है और वहां उतने ही कम जीव-जंतु मिलते हैं। तलहटी में रहने वाले जीवों को खाने को सबसे अंत में मिलता है।

समुद्र की अतल गहराईयों में रहने वाले तमाम जीव ऐसे होते हैं जो ज्यादा चलते-फिरते नहीं हैं - जैसे स्पान्जिस, स्टारफिश, सी-अरचिन, सी-लिलीज, सी-कुकम्बर्स आदि। क्योंकि चलने-फिरने में ऊर्जा खर्च होती है और इस ऊर्जा के लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन उपलब्ध होना जरूरी होता है। और समुद्र की तलहटी में बहुत कम ही भोजन मिलता है।

पर समुद्र की गहराईयों में ऐसी मछलियां जरूर मिलती हैं जो तैरती हैं पर बहुत धीमी गति से। समुद्र की गहराई में मिलने वाली सबसे मशहूर मछली है एंगलरफिश।

एंगलरफिशों की करीब 210 अलग-अलग प्रजातियां हैं और उनमें से सबसे बड़ी लगभग 4-फीट लम्बाई की होती हैं। ज्यादातर छोटी होती हैं।

वैसे तो एंगलरफिश हमारी जानी पहचानी मछलियों जैसी ही होती हैं - पर कुछ अनूठी होती हैं। मिसाल के लिए कुछ पर चमकने वाले धब्बे होते हैं। जानवरों की ऐसी कई प्रजातियां हैं जो रासायनिक प्रकियाओं द्वारा अपने शरीर के किसी हिस्से में प्रकाश पैदा करती हैं। वसंत में जुगनुओं का रात में चमकना इसका अच्छा उदाहरण है।

समुद्र की गहराईयों में कई जीव अपने शरीर पर विशेष नमूनों में चमकीले धब्बे पैदा करते हैं। इससे आसपास के स्याह अंधेरे में कुछ उजाला तो नहीं होता। इन चमकीले धब्बों का प्रकाश बहुत मंद होता है और उससे आसपास के अंधेरे पर कोई फर्क नहीं पड़ता है।

पर उसके बावजूद धब्बे अवश्य दिखाई पड़ते हैं। शायद इन धब्बों से उस विशेष प्रजाति के नर-मादा एक-दूसरे को देख पाते हों और पहचान पाते हों।
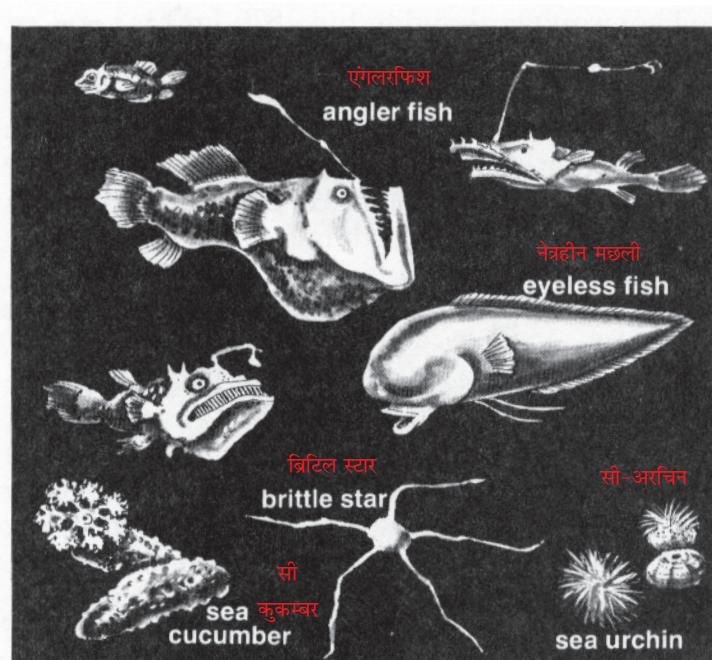
DEEP-SEA ANIMALS
गहरे समुद्र के जीव

गहराई में रहने वाली कुछ मछलियों की बहुत बड़ी आंखें होती हैं जिनसे वो इन हल्के प्रकाश के चकत्तों को भी पहचान लेती हैं। जो मछलियां चमकीले धब्बे नहीं विकसित कर पाई हैं उनकी अक्सर आंखें भी नहीं होती हैं। वो अक्सर समुद्र की तलहटी में भोजन तलाशती हैं या संभोग के लिए अपनी प्रजाति की अन्य मछलियों को खोजती हैं।

एंगलरफिश की सबसे बड़ी विशेषता है उसके गलफड़े की ऊपरी सतह का पहला कांटा। एंगलरफिश में यह कांटा गलफड़े से अलग होकर मछली के सिर पर स्थित होता है। कांटे के सिरे के अंत पर एक मांस का टुकड़ा लटका होता है जो किसी कीड़े जैसे हिलता-डुलता है। कुछ अन्य प्रजातियों में यह टुकड़ा एक छोटी मछली जैसा दिखता है। और हां, यह टुकड़ा हमेशा चमकता रहता है।

बहुत से जीवों को यह चमकीला हिस्सा एक भोजन के टुकड़े जैसा नजर आता है और वे उसकी ओर तैरते हैं। पास आने पर एंगलरफिश अपना बड़ा मुंह खोल कर उन्हें निगल जाती है। एंगलरफिश का लटकता टुकड़ा अपने भोजन को आकर्षित करने की एक चाल लगता है। वो बिल्कुल मछली पकड़ने वाली बंसी जैसा एक उपकरण है। मछली पकड़ने वाली बंसी के नाम पर ही इस मछली का नाम एंगलरफिश पड़ा है।

कुछ एंगलरफिशों में मादा, नर की अपेक्षा बहुत बड़ी होती है। जब नर एंगलरफिश को युवा मादा दिखती है तो वो उसकी पीठ को काटता है। फिर मादा के जिन्दा रहने तक नर उसी स्थिति में रहता है। अब नर-मादा दोनों की रक्त धाराएं आपस में मिलती हैं। उसके बाद नर का कोई स्वतंत्र वजूद नहीं रहता। वो मादा का ही एक अंग बन जाता है और उसके अंडों को फलयुक्त (फर्टीलाइज) करता है।
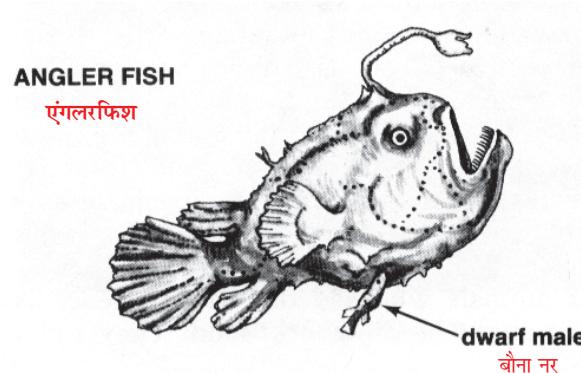
इससे गहन अंधेरे में एंगलरफिश की संभोग के लिए साथी खोजने की समस्या हल हो जाती है। नर को बस एक बार ही मादा तलाशनी होती है और उसके बाद उसे आगे कुछ नहीं करना होता है।

कभी-कभी अतल गहराई में रहने वाली मछली को एक बड़ा भोज खाने का अवसर मिलता है। उसे या तो अपने जैसी कोई बड़ी मछली दिखती है या फिर भोजन का कोई बड़ा टुकड़ा ऊपर से आता है। इन अवसरों पर मछली को चुस्ती के साथ उसे खत्म करना होता है।

गहराई में रहने वाली कुछ मछलियों को 'गल्पर्स' कहते हैं। उनका शरीर और पूंछ लम्बी और पतली होती है - कभी-कभी 6-फीट लम्बी। इस पतले से शरीर के आगे एक बड़ा सा सिर होता है - जो असल में एक बड़ा मुंह होता है। 'गल्पर्स' की कुछ प्रजातियों में सिर और मुंह का माप शरीर और पूंछ से ज्यादा लम्बा होता है।

जब 'गल्पर्स' के पास कोई बड़ी चीज आती है तो वो अपना विशाल मुंह खोलकर उसे निगलती है। भोजन फिसल कर उसके पेट में जाता है जो एकदम रबर के गुब्बारे जैसा फूल जाता है। वहां भोजन धीरे-धीरे पचता है। 'गल्पर्स' एक ऐसा जीव है जो अपने से बड़े जीव को निगल सकता है।

एक अच्छे भोजन से 'गल्पर्स' की भूख काफी समय के लिए मिट जाती है।
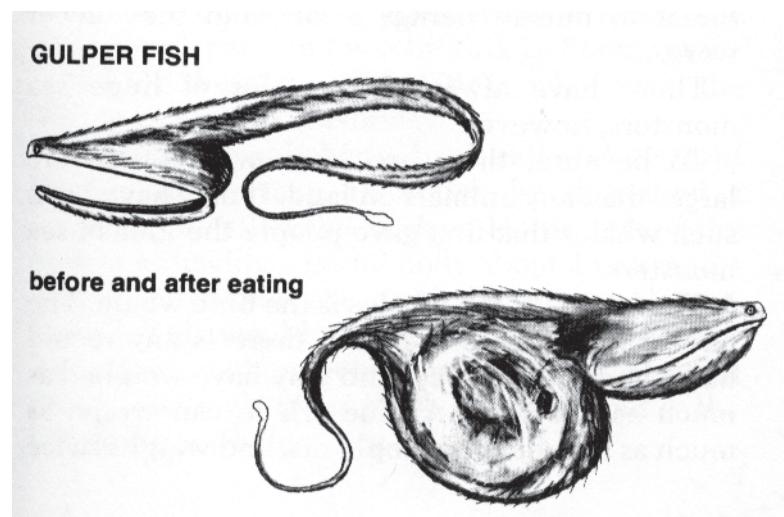
गल्पर मछली भोजन खाने से पहले और उसके बाद

## 4 स्क्विड्स और कोयलाकैन्थस

एंगलरफिश और गल्पर्स जैसे प्राणी देखने में भद्दे और उनके मुंह डरावने लगते हैं। अक्सर उनका आकार छोटा होता है और वे समुद्र की अतल गहराईयों में रहते हैं। उनसे मनुष्यों को न तो कभी कोई खतरा था और न है।

पर समुद्री दैत्यों के बारे में तमाम कहानियां प्रचलित हैं।

इतना अवश्य है कि समुद्र में विशालकाय व्हेल मछलियां होती हैं जो धरती पर पाए जाने वाले किसी भी जीव से बड़ी होती हैं। शायद ऐसी व्हेलों ने ही इंसान में समुद्री दैत्यों की कल्पना को जन्म दिया हो।

सबसे बड़ी व्हेल होती है ब्लू-व्हेल। आज तक पाई गई सबसे बड़ी ब्लू-व्हेल की लम्बाई 104-फीट और वजन 150-टन का था। एक ब्लू-व्हेल का वजन 15-हाथियों से भारी हो सकता है। उसकी भार पृथ्वी पर जन्मे सबसे बड़े डायनोसौर से दुगना हो सकता है।

सच तो यह है कि ब्लू-व्हेल पृथ्वी पर आज तक पाया गया सबसे बड़ा प्राणी है। यह भी संभव है कि समुद्र की गहराईयों में इससे से भी बड़े जीव हों जिन्हें हम न तो अभी तक पकड़ पाए हैं और न ही उनका अध्ययन कर पाए हैं।

लोगों ने समुद्र में दैत्यों को कभी-कभार देखा है। यूनानी मिथकों में अक्सर 'हायड्रा' नामक दैत्य का वर्णन आता है। उसको हरक्यूलीज से मारा। 'हायड्रा' की नौ गर्दने थीं जिनके अंत में एक विषैला सिर था। फिर 'स्कायला' था जिसकी छह लम्बी गर्दनें थीं और उनके अंत में छह सिर थे जो लगातार कुत्तों जैसे भौंकते थे। फिर 'मेडयूसा' थी जिसके बालों के स्थान पर जिंदा सांप थे।

सम्भवतः यह सभी दैत्य बड़ी जेलीफिश या आक्टोपस के आकारों से प्रेरित हुए हों। इन जीवों के सांपों जैसे तन्तु होते हैं जो धरती पर पैरों वाले चौपायों की तुलना में लोगों को बहुत डरावने लगते हैं।

एक विशाल तन्तुओं वाले समुद्री दैत्य का वर्णन स्कैन्डिनेविया के कई लेखकों ने किया है। उनमें से नौरवे के मशहूर लेखक ऍरिक पौनटापइहडान (1698-1764) हैं जो वहां बर्जन शहर के बिशप थे।

1752 में उन्होंने 'ए नैचुरल हिस्टरी ऑफ नौरवे' नामक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने क्रैकन नामक दैत्य का वर्णन किया। उनके वर्णन के मुताबिक क्रैकन का शरीर गोलाकर था और उसकी परिधि कोई डेढ़-मील की थी। उसके बहुत लम्बे तन्तु थे। इस वर्णन से क्रैकन तन्तुओं को अगर छोड़ भी दें तो भी

2500-फीट लम्बा होगा और उसका भार लगभग एक हजार ब्लू-व्हेलों जितना होगा।

ब्ले-व्हेल, डायनासौर और हाथी के तुलनात्मक आकार
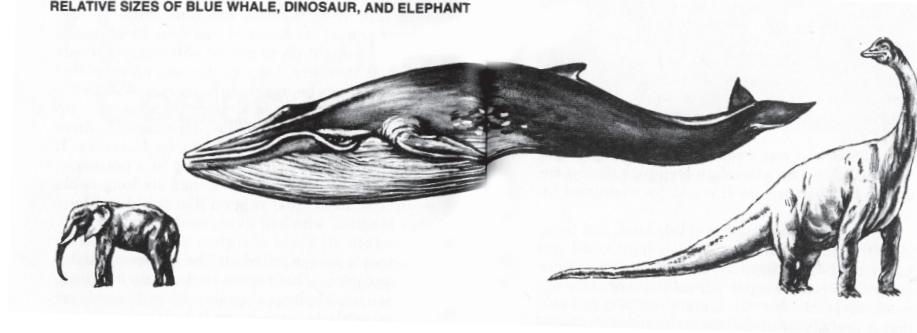
पौनटापइहडान के अनुसार उस दैत्य के तन्तु अपनी आगोश में बड़े से बड़े जहाज को लपेटकर उन्हे पानी के अंदर खींच लेते थे।

इतने बड़े दैत्य की कल्पना करना मुश्किल है। पर इसके बावजूद स्पर्म व्हेल्स के पेट में अक्सर बड़े लम्बे तन्तु मिलते हैं।

ब्लू-व्हेल्स और अन्य बड़ी व्हेल्स अक्सर बहुत छोटे-छोटे जीव खाती हैं। वो अपने विशाल मुंह को खोलकर एक साथ सैकड़ों गैलन पानी निगलती हैं जो उनके मुंह के कोने में व्हेल-बोन की छलनी से गुजरता है। छलनी में बचे छोटे जीवों और मछलियों को व्हेल निगल लेती है।

कई व्हेलों के दांत होते हैं जिससे वो अन्य जानवरों का मांस नोंच सकें। इनमें सबसे बड़ी स्पर्म-व्हेल होती है। स्पर्म-व्हेल की लम्बाई 67-फीट और उसका वजन 80-टन तक हो सकता है - जो ब्लू-व्हेल का लगभग आधा होगा।

क्या हम स्पर्म-व्हेल ने किसी क्रैकन के तन्तुओं को नोचने की कल्पना कर सकते हैं?

इसकी सम्भावना बहुत कम लगती है। बिशप पौनटापइहडान ने क्रैकन के वर्णन की तुलना में स्पर्म-व्हेल बहुत छोटी होगी। यह सम्भव है कि क्रैकन ने वर्णन बहुत बढ़ा-चढ़ा कर किया हो?

वैसे स्किविड नाम के जीव भी हैं जिनका आक्टोपस के साथ रिश्ता है। उनके बड़े सिर और लम्बे तन्तु होते हैं। वे तेजी से तैरते हैं। लोगों को आमतौर पर छोटी स्किविड दिखती हैं पर कभी-कभार विशाल स्किविड भी देखी गयी हैं।

यह विशाल स्किविड सामान्यत: सतह से आधे मील की गहराई में

रहती हैं और कभी-कभी ही सतह पर आती हैं। स्पर्म-व्हेल आधा-मील का गोता लगाती हैं और इस गहराई में आधे-घंटे तक रह सकती हैं। शायद यह डुबकी वो विशाल स्किविड के शिकार के लिए लगाती हैं।

1953 में एक विशाल स्किविड डेनमार्क के समुद्री तट पर मिली। इससे पहले कि वैज्ञानिक उसका अध्ययन करते उसे लोगों ने भोजन के काट डाला।

इसी प्रकार की अन्य रपटें भी आती रहीं। 1861 में एक विशाल स्किविड को हारपून (भाले) के जरिए शिकार कर एक जहाज पर खींचा गया। 1870 इस प्रकार की कई और खबरें मिलीं। अब वैज्ञानिकों ने विशाल स्किविड के जिन्दा होने की बात को स्वीकारा। क्रैकन के मिथक के पीछे विशाल स्किविड के होने की बात उन्हें जंची।

इतना अवश्य है कि सबसे विशालतम स्किविड भी क्रैकन का मुकाबला नहीं कर सकती। विशाल स्किविड बिना आंतरिक कंकाल वाला आज तक पाया गया वाला सबसे बड़ा जीव है - कम से कम वजन के लिहाज से। कुछ जेलीफिश उससे भी लम्बी होती हैं पर उनका भार बहुत हल्का होता है।

सबसे बड़ी विशाल स्किविड की लम्बाई 50-फीट से ज्यादा नहीं होती। और इसमें सबसे लम्बा हिस्सा उनके तन्तुओं का होता है। सबसे बड़ी विशाल स्किविड का भार 2-टन से अधिक का नहीं होता, जो कि गेंडे के भार का करीब आधा होगा।
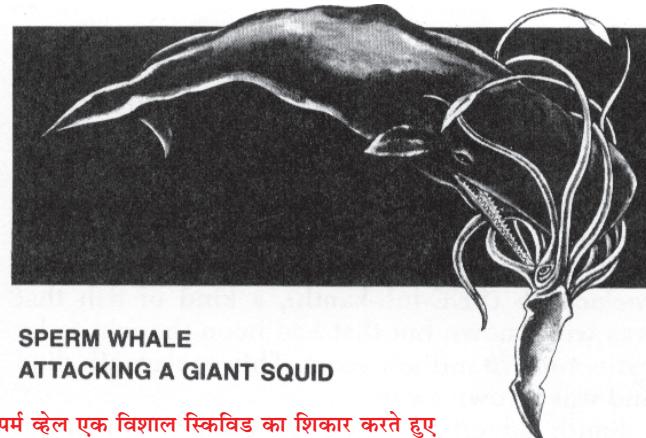
SPERM WHALE
ATTACKING A GIANT SQUID

स्पर्म व्हेल एक विशाल स्किविड का शिकार करते हुए

आज तक पैदा हुए सभी जीवों में शायद विशाल स्किविड की आंखें सबसे बड़ी होंगी - उनका माप 15-इंच व्यास का होता है। उसकी तुलना में ब्लू-व्हेल की आंख केवल 5-इंच की होती है।

क्या विशाल स्किविड और ब्लू-व्हेल से भी भीमकाय जीवों का समुद्र के किसी छिपे भाग में होना सम्भव है? हर समय विशाल समुद्री सांपों की खबरें मिलती रहती हैं - विशेषकर स्कॉटलैंड के तालाब लॉच नेस में।

अगर समुद्री सांप होंगे भी तो भी वो इतने बड़े नहीं होंगे। यह सम्भव है कि नए समुद्री जीव खोज के दौरान मिलें परन्तु ब्लू-व्हेल के सबसे बड़े प्राणी होने का रिकार्ड टूटना मुश्किल है।

भीमकार आकार के अलावा भी समुद्र में अनेकों अन्य अनूठी चीजें हैं।

25 दिसम्बर 1938 को दक्षिण अफ्रीका में मछली पकड़ने के दौरान एक 5-फीट लम्बी अनूठी मछली पकड़ में आई। उसके गलफड़े सीधे शरीर से जुड़ने की बजाए मांस के गोलों से जुड़े थे।

लंदन की म्यूजियम के एक विशेषज्ञ ने मछली को किनारे पर आने के बाद ही देखा। उसने उसका चित्र बनाकर जेम्स एल बी स्मिथ (1897-1968) नाम के वैज्ञानिक के पास भेजा। उन्होंने तुरन्त उस 'सीलोकैन्थ' को पहचान लिया। यह एक प्रकार की जानी-पहचानी मछली थी और ऐसा समझा जाता था कि 7-करोड़ वर्ष पहले वो लुप्त हो चुकी थी। वो सीलोकैन्थ मर गई थी और उसे फेंक दिया गया।
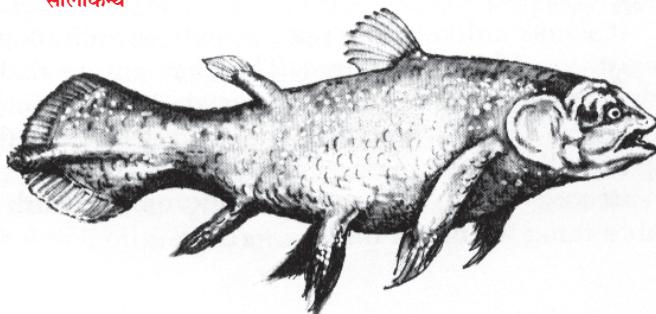
स्मिथ ने अखबारों में इश्तहार छपवाकर पूर्वी अफ्रीका में मछुआरों से इस प्रकार की मछली को खोजने की अपील की। और अगर वो ऐसी मछली को पकड़ पाएं तो तुरन्त स्मिथ को खबर करें। दुर्भाग्यवश तभी द्वितीय महायुद्ध शुरू हो गया और फिर बरसों तक कोई बात आगे नहीं बढ़ी।

1952 में ऐ अन्य सीलोकैन्थ पकड़ी गई और 1970 तक कोमोरो द्वीप - जो मैडागास्कर के उत्तरी-पश्चिम में स्थित है, के आसपास के करीब साठ

सीलोकैन्थ पकड़ में आयीं। यह मछलियां न तो लुप्त हुई थीं और न ही इनको पकड़ना बहुत दुश्वार काम था। वो समुद्री सतह से करीब 1000-फीट गहराई पर रहती थीं और बहुत कम ही सतह पर आती थीं।

सीलोकैन्थ मछलियों उस समूह की सदस्य है जिन्होंने 30 करोड़ वर्ष पहले समुद्र छोड़कर
धरती पर आक्रमण किया। वैज्ञानिकों की इन जिन्दा मछलियों के अध्ययन में गहरी रुचि थी।

## 5 पर्वत और खाईयां

चैलेन्जर जहाज के अन्वेषण के बाद लगभग 50 साल तक समुद्र की गहराईयों पर और कोई नया शोध नहीं हुआ। वैज्ञानिक इधर-उधर समुद्र की गहराई नापने के लिए 'साउंडिग' के अलावा और भला कर भी क्या सकते थे? मीलों लम्बी लाईन को समुद्र में डालना और फिर उसे ऊपर खींचना एक मुश्किल काम था। और यह करने से क्या हासिल होता? सिर्फ, विशाल महासागर में एक बिंदु की गहराई।

अगर इस प्रकार की हजारों 'साउंडिंग्ज' भी की जातीं (जिनमें बरसों लगते) उससे आप को समुद्र में कुछ हजार बिंदुओं की गहराई ही पता चलती। इन बिंदुओं के बीच समुद्र का तल के बारे में फिर भी नहीं पता चलता। इसलिए जब तक समुद्र में रस्सी लटकाने से कोई बेहतर तकनीक नहीं विकसित होती तब तक समुद्र की गहराई के बारे में और अधिक जानकारी हासिल करने का कोई औचित्य नहीं था।

ऐसी एक नई खोज प्रथम महायुद्ध के दौरान हुई। फ्रेंच भौतिकशास्त्री पॉल लहैनजवैन (1872-1946) उस समय दुश्मन की पनडुब्बियों को खोजने पर शोध कर रहे थे।

लहैनजवैन असल में एक अन्य फ्रेंच भौतिकशास्त्री पियरे क्यूरी (1859-1906) के छात्र थे। 1880 में पियेरे ने पाया कि अगर किसी क्रिस्टल में तेजी से बदलता हुई विद्युत धारा प्रवाह की जाए तो उसमें बहुत तीव्र कम्पन होते हैं। इन कम्पनों से ध्वनि की तरंगे उत्पन्न होती हैं। तरंगे क्योंकि बहुत छोटी होती हैं इसलिए वो लोगों को सुनाई तक नहीं देतीं। ऐसी ध्वनि को अल्टरासाउंड ध्वनि कहते हैं।

सामान्यत: ध्वनि की तरंगे बढ़ते हुए फैलती हैं और किसी वस्तु से टकराने पर मुड़ जाती हैं। पर अल्टरासाउंड ध्वनि तरंगे सीधी रेखा में बढ़ती हैं

और किसी वस्तु से टकराने के बाद परावर्तित होकर उसी पथ पर वापस लौटती हैं।

लहैनजवैन ने अल्टरासाउंड कम्पन द्वारा पनडुब्बियों को खोजने का प्रयास किया। उसने तरंगों की एक किरण को पानी में से भेजा। शायद वो पनडुब्बी से टकराकर वापस आए। वापस आने वाली परावर्तित किरण की पहचान से पनडुब्बी की दिशा का पता लगेगी। अगर पानी में ध्वनि की गति मालूम हो तो परावर्तित ध्वनि के वापस आने का समय पनडुब्बी की सही दूरी बताएगा।

इस प्रकार के उपकरण को दिशा-निर्देश (नैविगेशन) के लिए उपयोग किया जा सकता है क्योंकि उससे सामने आने वाली रुकावटों का पता चलता है। इसे रेन्जिंग कहते हैं। रुकावट कितनी दूर है उनसे यह भी पता चलता है। इसी वजह से इस उपकरण का नाम 'साउंड नैविगेशन एंड रेन्जिंग' यानी 'सोनार' पड़ा।

**सोनार कैसे काम करता है**

**HOW SONAR WORKS**
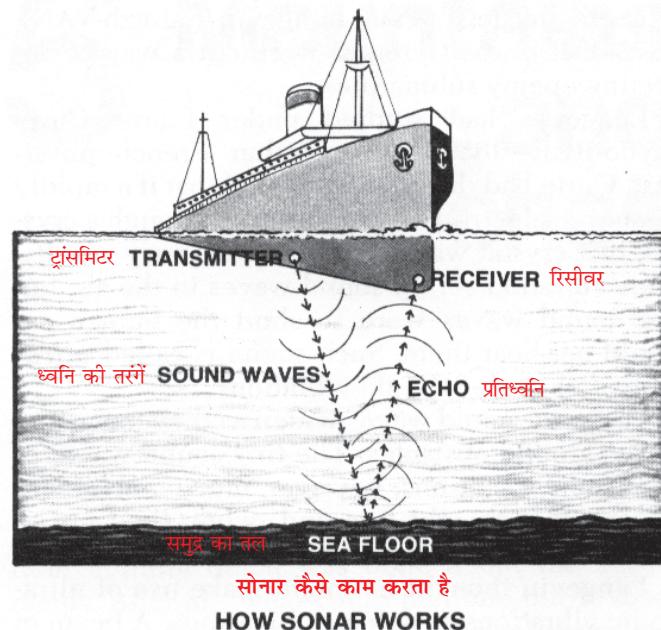
जब तक लहैनजवैन का उपकरण पूरी तरह तैयार हुआ तब तक प्रथम महायुद्ध समाप्त हो चुका था। इसलिए अब 'सोनार' का शांति के कामों में उपयोग हुआ। अगर अल्टरासाउंड कम्पनों की किरण को समुद्र में नीचे की ओर भेजा जाए तो वो तल से टकराकर वापस आएगी। किरण के वापस आने के

समय को नापने से समुद्र तल की गहराई का सही अनुमान लगाया जा सकेगा।

समुद्र में वजन बंधी रस्सी को डुबोने और फिर उसे निकालने के मुश्किल काम से 'सोनार' कहीं आसान था। अगर जहाज के चलते 'सोनार' चालू रहे तो आपको पूरे रास्ते में समुद्र की गहराई मालूम पड़ जाएगी।

'सोनार' सबसे पहले एक जर्मन जहाज 'मीटियोर' में लगा।

हुआ यह कि जर्मन रसायनशास्त्री फ्रिटज हेबर (1868-1934) को समुद्र के पानी में से सोना निकालने का फितूर सवार हुआ। प्रथम महायुद्ध में हार के बाद जर्मनी को विजयी देशों को सोने में दंड चुकाना था। हेबर को लगा कि समुद्र में सोने के मंथन से जर्मनी इस जिम्मेदारी से उबर पाएगा।

मीटेयोर जहाज का काम हेबर की कल्पना की पुष्टि करना था। 1922 में जहाज पानी में उतरा। हेबर का सपना जल्द ही चकनाचूर हो गया। समुद्री पानी में बहुत अल्प मात्रा में ही सोना घुला होता है। सोने को समुद्र के पानी से निकालना बहुत मंहगा साबित होगा।

पर मीटेयोर जहाज ने 'सोनार' की सहायता से समुद्र की गहराई के आंकड़े एकत्रित किए जिनसे समुद्र की समझ में क्रांतिकारी बदलाव आया।

**MID-ATLANTIC RIDGE**
मिड-एटलांटिक रिज
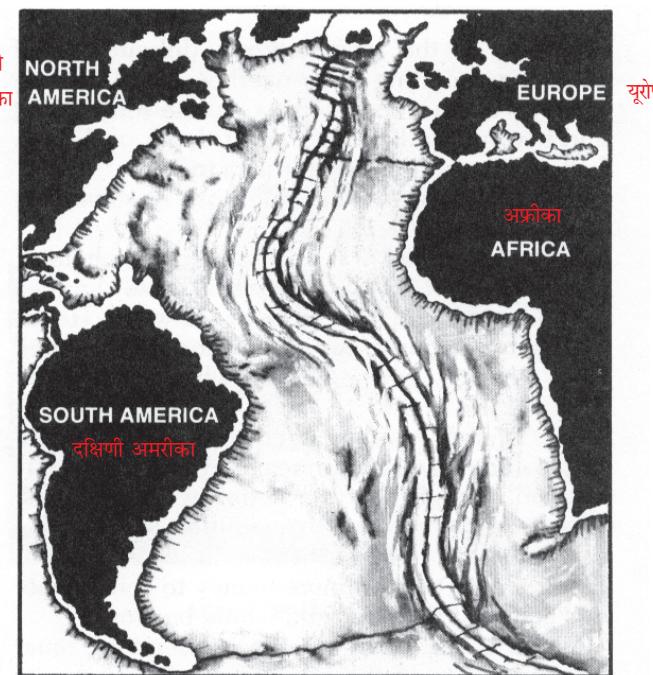
उससे पहले वैज्ञानिक समुद्र की तलहटी को लगभग समतल मानते थे। पर मीटेयोर के शोध ने अतलांतिक महासागर के मध्य में पर्वत होने की पुष्टि की। 1925 तक मीटेयोर ने अतलांतिक महासागर में एक विशाल पर्वतश्रृंखला के होने की पुष्टि की जो जमीन पर स्थित पर्वतों से कहीं ऊंचे थे! इसे पर्वतमाला को मिड-एटलांटिक रिज बुलाया जाता है।

'सोनार' के शोध से बाद में पता चला कि मिड-एटलांटिक रिज अन्य महासागरों में भी फैली है और दरअसल यह एक मिड-ओशिनिक रिज है।

जिस प्रकार समुद्र में पर्वत होते हैं जो तलहटी से ऊपर उठते हैं उसी तरह समुद्र में घाटियां या खाईयां भी होती हैं जो समुद्र के औसतन स्तर से नीचे होती हैं।

यह घाटियां समुद्र की तलहटी में मात्र गड्ढे नहीं होते। इन वक्र क्षेत्रों को ट्रेन्च बुलाते हैं और यह द्वीपों की श्रृंखला महासागरों की सीमाओं के किनारे पर होती है।

द्वितीय महायुद्ध के बाद से समुद्र की तलहटी का और गम्भीर अध्ययन हुआ और विभिन्न घाटियों की सही गहराई नापी गई। एक अन्य जहाज चैलेन्जर (थामसन के सम्मान में रखा नाम) ने शोध द्वारा महासागरों के सबसे गहरे भाग को दक्षिणी प्रशान्त महासागर में स्थित पाया।

अफ्रीका
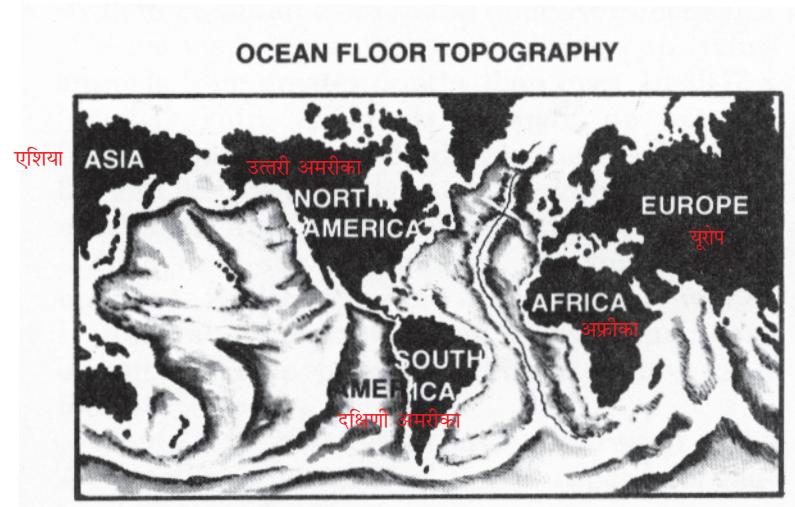
चैलेन्जर को फिलिपीन्स से 1500-मील पूर्व में स्थित मरियानाज द्वीप के पास समुद्र के सबसे गहरे होने का पता चला। मरियानाज द्वीप का सबसे बड़ा

और दक्षिण स्थित द्वीप का ना गुवाम है। 1898 से यह द्वीप अमरीका के कब्जे में है।

गहरे पानी की इस खाई को 'मारियानाज ट्रैन्च' बुलाया जाता है। उसके सबसे गहरे भाग को चैलेन्जर जहाज के सम्मान में 'चैलेन्जर डीप' बुलाया जाता है। यह गुवाम से 250-मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। 1951 में इसकी गहराई नापी गई जो 35760-फीट या पौने-सात मील गहरी निकली। अगर पृथ्वी के सबसे ऊंचे पर्वत माउंट एवरेस्ट को चैलेन्जर डीप में खड़ा किया जाता तो उसकी चोटी के ऊपर सवा मील तक समुद्री पानी होता!

1959 में एक रूसी जहाज वित्याज ने उसके पास ही कुछ ज्यादा गहरा 36198-फीट गहरा स्थान खोजा।

## 6 महासागरों पर शोध करने वाले लोग

समुद्र पर नए शोध ने फिर एक सवाल खड़ा किया। क्या समुद्र की सबसे गहरी खाईयों में भी जीव-जंतु पाए जाते हैं?

अब जहाज और अधिक गहराई से जीव-जंतुओं को ऊपर लाने के प्रयास में थे। 1947 में स्वीडिश जहाज एलबैटरॉस उत्तरी अतलांतिक महासागर में 5-मील की गहराई से जीव-जंतु लाया। 1952 में डैनिश जहाज गालाथिया करीब 6-मील की गहराई से प्राणी ऊपर लाया।

इतनी अधिक गहराई से ऊपर लाए जीव बहुत देर तक जीवित नहीं रहे। इन जीव-जंतुओं का सही अध्ययन उनके प्राकृतिक माहौल में ही करना ठीक होगा। उसके लिए इस अतल गहराई में जाना होगा। यह कैसे सम्भव होगा?

क्या पानी के अंदर तैरने वाले जहाज बनाना सम्भव होगा - एक स्टील का बंद बक्सा जो मनमर्जी से पानी के अंदर इधर-उधर आ-जा सके?

पानी के अंदर कम-से-कम कुछ देर के लिए तैर सकने वाले पहला जहाज कोरनीलियस वान डरेबिल (1572-1634) ने 1620 में बनाया। उसने लकड़ी और चमड़े से बने इस 12-फीट लम्बे जहाज को पानी के अंदर तैराने का प्रयास किया। 1801 में अमरीकी आविष्कारक रॉबर्ट फुल्टन (1765-1815) ने सबसे पहला भाप का जहाज बनाया। उसने नैपोलियन बोनापार्ट के लिए नौटेलस नाम की पनडुब्बी बनाई। पर वो नौपोलियन के काम न आई।

उसको पानी में इधर-उधर ले जाने-लाने में मुश्किल आई। आप चाहें तो उसमें एक भाप चलित इंजन लगा सकते थे। परन्तु उससे जल्द ही पनडुब्बी की सारी हवा खत्म हो जाती।

1870 में विज्ञान गल्पकथाओं के मशहूर लेखक जूल्स वर्न ने लोकप्रिय पुस्तक लिखी - 'ट्वेन्टी थाऊजेन्ड लीग्स अंडर द सी' जिसमें उन्होंने रॉबर्ट फल्टन द्वारा निर्मित पनडुब्बी नौटिलस के एक संशोधित संस्करण की कल्पना की। इससे प्रेरणा पाकर आविष्कारक अपने शोध में जुट गए।

अंत में 1866 में इंग्लैंड में एक पनडुब्बी का इजाद हुआ (उसका भी नाम नौटेलस रखा गया)। यह पनडुब्बी बिजली की बैटरियों द्वारा चलित थी। बैटरियों से पनडुब्बी आसानी से पानी में इधर-उधर तैर सकती थी। पर उसे बैटरियां चार्ज करने के लिए अक्सर सतह पर आना पड़ता था। पर फिर भी वो चार्जिन्ग से पहले 80-मील की दूरी तय कर सकती थी।

प्रथम महायुद्ध से पहले जंग में शामिल सभी देश पनडुब्बियों का उपयोग कर रहे थे।

द्वितीय महायुद्ध के बाद से आणविक पनडुब्बियां बनाने का काम शुरू हुआ। बैटरियों को रीचार्ज करने के लिए आणविक पनडुब्बियों को पानी की सतह पर आने की कोई जरूरत नहीं थी। आणविक पनडुब्बियां समुद्र के अंदर बहुत समय तक रह सकती थीं।

1955 में अमरीका ने पहली आणविक पनडुब्बी का उद्घाटन किया। इस बार फिर उसका नाम नौटिलस रखा गया। रूस ने पहली आणविक पनडुब्बी 1959 में, इंग्लैंड ने 1963 में बनाई।

यू एस एस नौटिलस - पहली अमरीकी आणविक पनडुब्बी
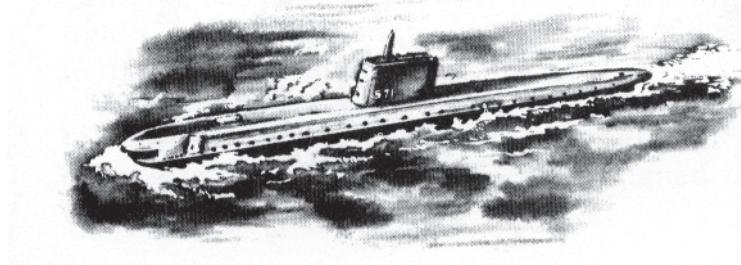
आणविक पनडुब्बियों ने बर्फ के नीचे दबे आर्कटिक महासागर का सफर किया है। कई पनडुब्बियों ने बिना सतह पर आए पूरी पृथ्वी की परिक्रमा की है। वो तीन महीनों तक आसानी से पानी के अंदर रह सकती हैं।

साधारण पनडुब्बियां पानी के अंदर 8310-फीट (डेढ़-मील) की गहराई तक जा सकती हैं। पर कुछ अन्य पनडुब्बियां और ज्यादा गहराई तक जा सकती हैं।

इस बीच समुद्र में और गहराई तक डुबकी लगाने वाले उपकरण बनने लगे। इनमें सबसे पहले उपकरण को अमरीकी प्रकृतिशास्त्री चार्ल्स विलियम बीबी (1877-1962) ने उपयोग किया।

बीबी का उपकरण मात्र एक बड़ी स्टील की गेंद थी जिसमें दो लोग बैठ सकते थे। उसका कवच डेढ़-इंच मोटा था और बैठने की जगह सिर्फ 54-इंच चौड़ी थी। उसका वजन ढाई-टन का था और उसे पानी के जहाज से एक स्टील के केबल द्वारा पानी में उतारा जा सकता था। अगर किसी कारणवश केबिल टूट जाता तो फिर स्टील का गोला सीधे समुद्र की तलहटी में पहुंचता और उसे निकालने का कोई साधन नहीं था।

बीबी ने इसे बेथिश्फीयर नाम दिया (यानी गहराई की गेंद)।

1934 में बीबी और उसके साथी ओटिस बॉरटन को समुद्र की सतह से 3028-फीट नीचे लटकाया गया। 1948 में बॉरटन ने उससे भी मजबूत एक और बेथिश्फीयर बनाया जिससे कि वो 4500-फीट की गहराई तक गया। वहां मोटे कांच की खिड़की और कृत्रिम प्रकाश में वो पानी की गहराई में जीव-जंतुओं को उनके प्राकृतिक परिवेश में देख पाया।

**WILLIAM BEEBE,**
**OTIS BARTON,**
**AND BATHYSPHERE**
**AUGUST 11, 1930**

विलियम बीबी
ओटिस बॉरटन
और उनका बेथिश्फीयर
(अगस्त 11, 1930)
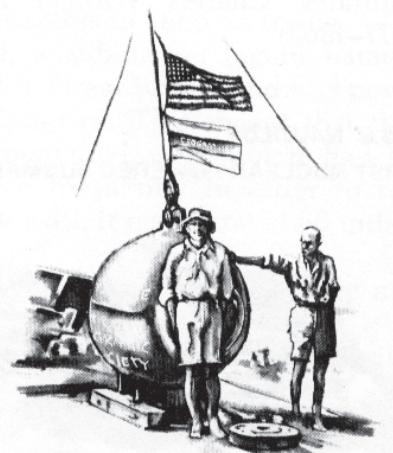
कुल मिलाकर बेथिश्फीयर की मदद से समुद्र में 30-गहरे गोते लगाए गए। पर उससे जो कुछ किया जा सका वो सीमित था।

जरूरत थी एक ऐसे उपकरण की जिसे खुद की ऊर्जा से डुबोया जा सके या सतह पर लाया जा सके और जो समुद्र की अतल गहराईयों में सुरक्षित जा सके।

स्विस वैज्ञानिक औगस्त पिकार्ड (1884-1962) इसी प्रकार के उपकरण के सपने देख रहा था। 1930 में पिकार्ड हल्के गुब्बारों से लटकी एक स्टील की टोकरी में बैठकर हवा में 10-मील की ऊंचाई तक उड़ चुका था। कुल मिलाकर उसने गुब्बारों की सहायता से ऊपरी वायुमंडल में सफलतापूर्वक 27 उड़ाने भरी थीं।

1933 के शिकागो विश्व मेले में पिकार्ड की मुलाकात बीबी से हुई। उसके बाद से पिकार्ड उल्टी दिशा में यानी समुद्र की गहराई के अन्वेषण के बारे में गम्भीरता से सोचने लगा।

गुब्बारों से हवा में एक स्टील की गोला लटकाने की बजाए उसे पानी में लटकाएं जिससे कि वो ऊपर भी आ सके। उसने बैथिस्काफ (गहराई के जहाज) का इजाद किया।

बैथिस्काफ के दो हिस्से थे। ऊपरी हिस्सा सिगार के आकार का था जिसमें तेरह टंकियां थीं। ग्यारह पट्रोल से भरी थीं और दो खाली थीं। क्योंकि पट्रोल पानी से हल्का होता है इसलिए पानी में डुबोने पर पट्रोल की टंकियां ऊपर आने का प्रयास करेंगी।

बैथिस्काफ के निचले हिस्से में एक बेथिश्फीयर होगा जिसमें वैज्ञानिक और उनके उपकरण होंगे। बैथिस्काफ का डिजायन इस प्रकार का था कि वो बेथिश्फीयर के भार को उठा सके।

दो खाली टंकियों को खोलकर समुद्र के पानी से भरा जा सकता था। पानी के अतिरिक्त भार से बैथिस्काफ समुद्र में डूब जाता। वो डूब कर समुद्र की तलहटी तक जा पहुंचता।

अगर वो बहुत तेजी से डूबता तो बेथिश्फीयर में भरी 13-टन भार की लोहे की छोटी गोलियों को धीरे-धीरे करके छोड़ा जा सकता था। इससे बेथिश्फीयर थोड़ा हल्का होता और धीमी गति से डूबता। पर्याप्त मात्रा में लोहे की गोलियों को छोड़ने से बेथिश्फीयर समुद्र की सतह पर वापस आ जाता।

बैथिस्काफ के एक बार नीचे-ऊपर चक्कर लगाने के बाद उसकी टंकियों में से समुद्र का पानी निकाल कर लोहे की गोलियों की नई सप्लाई भरी जा सकती थी। इससे वो समुद्र में अगले गोते के लिए तैयार हो जाता।

पिकार्ड को अपना बैथिस्काफ बनाने के लिए द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने का इंतजार करना पड़ा। 1948 में उसका पहला मॉडल तैयार हुआ। उसमें

परीक्षण और सुधार के बाद एक नया मॉडल बनाया गया। यह मॉडल 15 फरवरी 1954 को तैयार हुआ। पश्चिमी अफ्रीका के तट से दो फ्रेंच नौ-सेना के अफसर 13287-फीट (ढ़ाई मील) की समुद्री गहराई तक गए और फिर सुरक्षित सतह पर आए।

1953 में बैथिस्काफ का एक बेहतर मॉडल बना जिसका नाम था - ट्रेइस्ट। 1958 में इसे अमरीकी नौ-सेना ने खरीद लिया। उसे कैलिफोर्निया ले जाया गया और उसमें अन्य सुधार किए गए। फिर उस पर एक बड़ा परीक्षण किया गया।
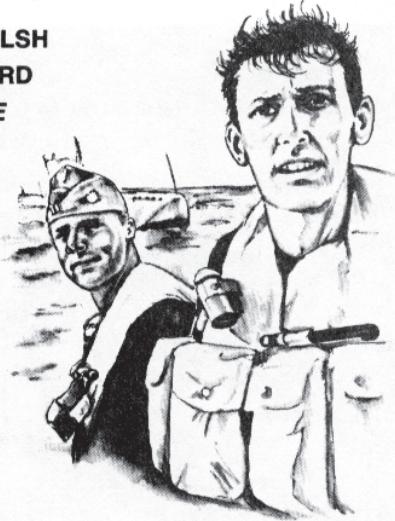
उसे सीधा मारियाना ट्रैन्च में भेजा गया। उसमें औगस्त पिकार्ड के बेटे जैक्यू पिकार्ड (1922-) और एक अन्य अमरीकी नौ-सेना के अफसर डॉन वाल्श सवार थे।

23 जनवरी 1960 को सुबह 8 बज कर 20 मिनट पर ट्रेइस्ट 35810-फीट (पौने-सात मील) की गहराई में मारियाना ट्रैन्च की तलहटी तक गया और वहां की मुलायम मिट्टी पर जाकर टिका। तलहटी की मिट्टी के पानी में मिल जाने से कुछ देर के लिए पानी में कुछ दिखाई नहीं दिया पर फिर सब साफ हो गया। फिर दोनों शोधकर्ताओं को सर्चलाईट से एक-इंच लम्बी रेड-श्रिम्प तैरती दिखाई दी। उन्हें एक अन्य एक-फुट लम्बी मछली भी दिखाई दी।

इससे पहले भी वैज्ञानिकों को समुद्र की तलहटी में जीव-जंतुओं के

होने का पता था। पर अब समुद्र की सबसे अधिक गहराई में प्राणी होने का साक्षात प्रमाण सामने था।

बैथिस्काफ ने उसके बाद लोहे की गोलियों को बाहर फेंकना शुरू किया और वो धीरे-धीरे करके ऊपर सतह तक उठा। दोनों लोग शाम 5 बजे तक यानी नौ घंटे बाद साढ़े तेरह मील का एक बेहद खतरनाक सफर तय करके वापस आए।
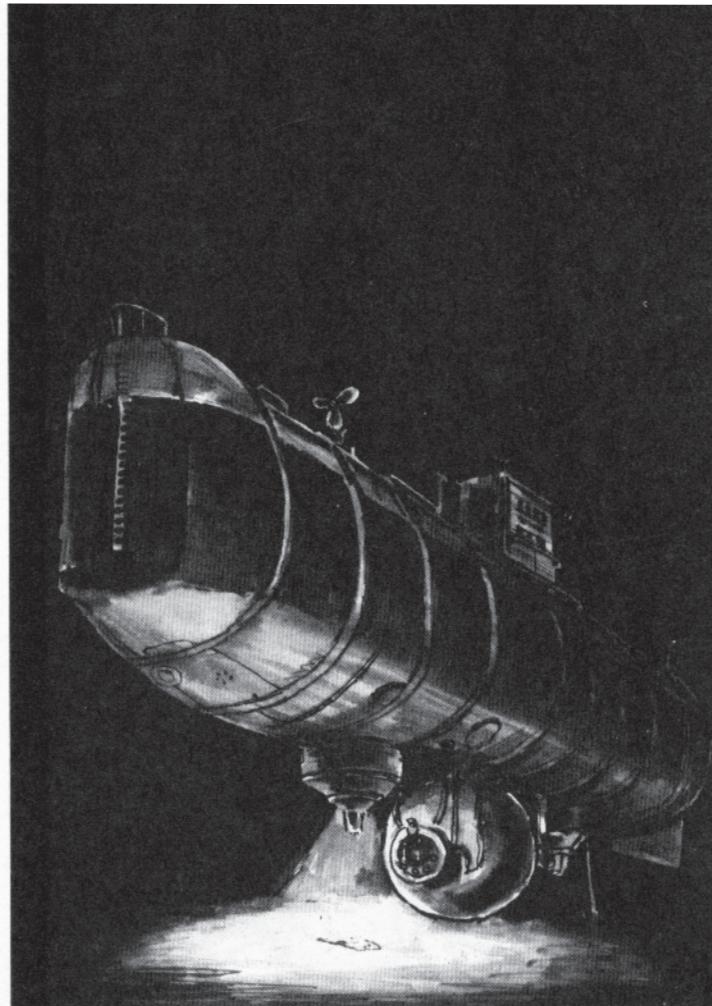
THE *TRIESTE* द ट्रेइस्ट

क्या समुद्र की अतल गहराईयों में गोता लगाने वाले लोगों के लिए कुछ अन्य आश्चर्य अभी बाकी हैं?

हां, बिल्कुल। पृथ्वी की ऊपरी सतह (क्रस्ट) अलग-अलग प्लेट्स में बंटी है। प्लेटें जहां एक-दूसरे से मिलती हैं वो कमजोर स्थान होते हैं। कुछ जगहों पर 'हॉट स्पाट्स' होते हैं जहां पृथ्वी के नीच की गर्मी कभी-कभी इन कमजोर स्थानों से ऊपर आ सकती है। 1965 में पहली बार इन 'हॉट स्पाट्स' के होने का अंदाजा लगा और 1970 में ऊपर आ रही गर्म पानी की धाराओं के अध्ययन से उन्हें पहचाना गया। (ऊपर-नीचे की धाराएं 'हॉट स्पाट्स' के बिना भी चलती रहतीं। पर 'हॉट स्पाट्स' से उन्हें सहायता मिलती है।)

1977 की शुरुआत में वैज्ञानिकों ने गहराई में गोता लगाने वाली पनडुब्बी की सहायता से 'हॉट स्पाट्स' के नीचे की समुद्री जमीन का निरीक्षण किया। यह स्थान गैलापोगस द्वीप के पूर्व और कैलिफोर्निया की खाड़ी के मुंह के समीप था। इन 'हॉट स्पाट्स' पर उन्हें चिमनियां दिखाई दीं जिनसे गर्म धुंए के साथ मिट्टी ऊपर आ रही थी। और इससे आसपास के पानी में लवण घुल रहे थे।

इन लवणों में गंधक की अधिक मात्रा होती है। इन 'हॉट-स्पाट्स' के आसपास का क्षेत्र विशेष प्रकार के बैक्टीरिया से भरा था जो अपनी सारी ऊर्जा प्रकाश की बजाए गंधक और गर्मी से पैदा करते थे। छोटे जीव इन बैक्टीरिया को खाते और बड़े जीव छोटे जीवों को भोजन बनाते।

यह एक नए प्रकार का भोजन चक्र था जो समुद्र की सतह पर प्रकाश निर्मित पौधों की ऊर्जा पर निर्भित नहीं था। यह भोजन चक्र सूर्य के प्रकाश के अभाव में भी टिका रह सकता है। इसके लिए जरूरी है कि पृथ्वी की गर्त से लवण और गर्मी लगातार बाहर निकलती रहे। पर यह सब 'हॉट-स्पाट्स' के आसपास ही सम्भव है।

वैज्ञानिकों को सीपियां, क्रैब और विभिन्न प्रकार के कीड़े मिले जिनमें से कुछ बहुत बड़े आकार के थे। यह विशेष प्रकार की प्रजातियां हैं जो रासायनों से युक्त पानी में जिन्दा रहती हैं। अन्य प्रजातियों के लिए यह पानी घातक साबित हो सकता है।

इससे आपको अंदाजा लगा होगा कि अभी भी हमें समुद्र की गहराई में रहने वाले प्राणियों के बारे में बहुत कुछ और जानना है।

**TUBE WORMS NEAR GALAPAGOS ISLANDS**

गैलापोगस द्वीप के पास ट्यूब वर्म

## अंत